।। ओ३म् ।।

# प्रभु से विनय

हे प्रभु! तू कल्याण करने वाला है। आज तू हमें क्यों प्रेरित नहीं कर रहा है। हम भी तो तेरी सृष्टि में आए हैं। यह संसार भी तो आपका बनाया हुआ है। भगवन्! आपने इन दुराचार और इन पाप कर्मों को क्यों रचाया? आज प्रभु! इनको न रचाते तो हम संसार में पापी न बनते। प्रभु आज हम पापी हैं। हमें अपने कंठ से लगा। आज हमें प्रेरणा देकर उन पाप भावनाओं को समाप्त करा। प्रभु! हम ज्ञान अग्नि में इन्हें भस्म करना चाहते हैं। विधाता! हम तेरी शरण के लिए महत्ता चाहते हैं। प्रभु! तेरी सहायता चाहते हैं। हमें वह सहायता दे जिससे हम ब्रह्मा के समीप जाएँ, हम यज्ञशाला में जाएँ। अग्नि प्रज्वलित करें और देवताओं को हवि दें। देवता उसे पाकर प्रेरणा देंगे जिन प्रेरणाओं को पाकर प्रभु! हम तेरी गोद में जाएँगे। हे कल्याणकारी प्रभु! तू कहाँ है? आज हमारे कल्याण के लिए योजना बना। हम तेरी संसार रूपी यज्ञ वेदी पर आए हैं। हमें प्रेरणा दे। हमें महान् बना। हम वास्तविक ब्रह्मा बनें, योगी बनें। आज विधाता हम अपना ही कल्याण नहीं चाहते हम संसार का कल्याण चाहते हैं।

**पूज्यपाद–गुरुदेव**

**(यज्ञ प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व)**






अँक : 508 समग्र अँक : 583

वर्ष : 43 समग्र वर्ष : 49


## अनुक्रम


| क्रम संख्या | विषय | | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|---|
| 1. | प्रभु से विनय | पूज्यपाद–गुरुदेव | 3 |
| 2. | अनुक्रम | | 4 |
| 3. | गन्धर्व | पूज्यपाद–गुरुदेव | 5–20 |
| 4. | ऋण से उऋण होने का मार्ग | पूज्यपाद–गुरुदेव | 21–32 |
| 5. | यज्ञ क्या है | पूज्यपाद–गुरुदेव | 33–36 |
| 6. | Spiritual Lights (Contd.) | Pujyapad Gurudev | 37–39 |
| 7. | दान, पुस्तकों की सूची, प्राप्ति के स्थान व सूचना आदि | | 40–42 |


## चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (पूर्व शृङ्गी ऋषि जी) के शुभ आशीर्वाद से प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी चतुर्वेद पारायण ब्रह्म महायाग का आयोजन लाक्षागृह बरनावा में श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय के प्रांगण में दिनाँक 22 फरवरी, 2015 से 1 मार्च, 2015 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सब अपने सम्बन्धियों व मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

**श्री गाँधी धाम समिति (पंजी.)**

## सभी को नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएँ


**शृङ्गीऋषि बेवसाईट**

**Website : www.shringirishi.in**

**Email : www.contact@shringirishi.in**

।। ओ३म् ।।

# गन्धर्व

जीते रहो!

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन–पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि परमपिता परमात्मा जितना भी यह परमाणुवाद है अथवा यह जो जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, इसके एक–एक कण में वह व्याप्त है। वह इस संसार का एक सूत्रमयी बना हुआ है, जैसे सूत्र में सर्वत्र ओत–प्रोत रहता है। तो हमें इस सूत्र के ऊपर विचार–विनिमय करना चाहिए। प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है कि वह उस सूत्र के ऊपर विचार–विनिमय करे, जिस सूत्र में यह ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है, जिस सूत्र में यह जगत ओत–प्रोत हो रहा है। मेरे पुत्रो ! वह हमारे जीवन का साथी है। जीवन का निरीक्षण करने वाला है। हम उसी की आभा में रमण करते चले जाएँ। प्रातःकाल हो, सायँकाल हो, मध्यकाल हो, कोई भी काल हो परन्तु **उसका स्मरण सदैव रहना चाहिए।** यह मानव की एक साधना कहलाती है। प्रत्येक मानव यह कहता रहता है। मेरे प्यारे महानन्द जी यह प्रेरणा देते रहते हैं परन्तु यह साधना के सम्बन्ध में भिन्न–भिन्न प्रकार की विवेचना करते रहते हैं। उनके ऊपर नाना प्रकार की टिप्पणियाँ भी होती रहती हैं। तो आज मैं तुम्हें पुत्रो ! टिप्पणियों में तो ले जाना नहीं चाहूँगा।





**साधना का क्षेत्र**

केवल विचार यह कि मानव साधना के क्षेत्र में रमण करना चाहता है। हमने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि मानव जब एकान्त स्थली पर विद्यमान होता है, तो वह इस शरीर से हम जो कर्म करते हैं उनका सबसे प्रथम चित्रण आने लगता है। कोई मानव उस पर विचार–विनिमय नहीं करता कि वह चित्रण क्यों आता है? जब मनुष्यतत्व एक सूत्र में आता है तो उसे एक प्रेरणा प्राप्त होती है। सबसे प्रथम मानव साधना में जाने से पूर्व उस चित्रण को जाने। यह जो नाना अशुद्ध चित्र तेरे समीप, जो तेरे क्रियाकलाप जीवन में हुए हैं उनके तेरे समीप चित्र आ रहे हैं।

बेटा ! साधना उस काल में सिद्ध होती है जब सदैव चित्रों में प्रभु की प्रतिभा दृष्टिपात आने लगे और प्रभु की महिमा का वर्णन आने लगता है, तब उसका व्यापक जीवन बन जाता है। वह परमाणुवाद के चित्र में पिरोया हुआ दृष्टिपात करता है। तो वह मानव की साधना है। एक मानव याग करता है। हमने बहुत पुरातन काल में कहा था कि किसी वस्तु की रूढ़ि बन जाना ही उसका हृदय से चले जाना है। एक मानव याग कर रहा है और वह याग करता हुआ अपने जीवन को यदि यज्ञमयी नहीं बनाता तो जानो कि बेटा ! वह मानव याज्ञिक नहीं होगा। हम पुरातन काल में जब गुरुओं के समीप जाते थे तो सबसे प्रथम उन्होंने याग करने की क्रिया को निर्णीत किया और बेटा ! प्रातःकाल, सायँकाल जब याग करते थे तो उसके पश्चात् आचार्य यह कहा करते थे कि याग हमें क्या वर्णन करा रहा है? याग हमें किस स्थली पर ले जा रहा है? हम यह कहा करते थे कि पूज्यपाद हम इसको नहीं जानते। परन्तु पूज्यपाद उस पर निर्णय कराते रहते। धीमी–धीमी शिक्षा देते रहते। मधु विद्या का वर्णन करते हुए यह कहा करते कि यह **जो याग–कर्म है यह सर्वत्र कर्मों में एक श्रेष्ठ कर्म कहलाता है। यह मानव को त्याग के क्षेत्र में ले जाता है** कि मानव के द्रव्य का सदुपयोग होता

है और उसी के अनुसार हम अपने विचारों को बनाते हैं। हम नाना साकल्य को लेते हैं, जलों को लेते हैं। अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। अग्नि में हम घृत देते हैं। अग्नि में साकल्य प्रदान कर देते हैं। वह अग्नि प्रचण्ड हो करके उनको निगल जाती है। अपने में धारण कर लेती है। उसी प्रकार मेरे प्यारे ! जैसे बाहरीय जगत में यह अग्नि प्रचण्ड हो करके, प्रदीप्त हो करके यह बाहरीय जगत को शोधन करती है।

उसी प्रकार **मानव को अपनी ज्ञान रूपी अग्नि को प्रदीप्त करना है** और जब ज्ञान रूपी अग्नि प्रदीप्त हो जायेगी, तेरा जो हृदय है, उसमें जितना भी अशुद्धवाद है, जब अन्तरिक जगत में ज्ञान रूपी अग्नि प्रचण्ड हो जाती है, वह प्रकाशित हो जाती है तो जो भी उसको छूता है वह नष्ट हो जाता है। स्पर्श करने मात्र से ही मेरे प्यारे ! वह नष्ट होने लगता है। परिणाम क्या है? मुनिवरो ! ऋषियों ने, आचार्यों ने यह कहा है कि सबसे प्रथम ज्ञान होना चाहिए। **ज्ञान का प्रकाश मानव के आन्तरिक जगत में होना चाहिए और जब आन्तरिक जगत् में ज्ञान हो जाता है, व्यापक ज्ञान हो जाता है तो मुनिवरो ! वह मानव जब ध्यानावस्थित होता है, साधना के क्षेत्र में जाता है तो बेटा ! वह स्वच्छ बन जाता है।**

ऋषि मुनियों ने एक वाक्य और भी कहा है कि इस मन को पवित्र बनाने के लिए, इस क्रियाकलाप को ऊँचा बनाने के लिए **सबसे प्रथम आहार और व्यवहार की आवश्यकता होती है।** हमारा आहार किस प्रकार का होना चाहिए। मेरे प्यारे ! मुझ वह काल स्मरण आता रहता है **जब माता अरुन्धति और वशिष्ठ मुनि महाराज,** भयँकर वन में तप करते थे तो वनस्पतियों का पान करते थे। उन्हें वनस्पतियों का ज्ञान था उसे वह पान करते थे और सायँकाल को वायु का आहार करते थे। तो मेरे प्यारे ! प्राण शक्ति उनकी प्रबल रहती और उनकी साधना में एक महानता रहती।

मेरे पुत्रो ! यह जो साधना के क्षेत्र वाले ब्रह्मवेत्ता कहलाये जाते हैं उन तपस्वियों की ही लाखों वर्षों पूर्व की गाथाएँ हमारे समीप





आ रही हैं। **परिणाम क्या है कि हम ज्ञान के क्षेत्र में जा करके साधना में परणित हो जाएँ।** यह जो संसार का व्यापार है यह जो संसार में मोह–ममता इत्यादि है यह मानव को कहाँ ले जाती है? यह मानव को वृक्ष जैसी योनियों को प्राप्त करा देती है, जहाँ अन्धकार ही अन्धकार रहता है। प्रकाश नहीं रह जाता। मैं इन वृक्षों की ही चर्चा नहीं उन योनियों की चर्चा कर रहा हूँ जहाँ अन्धकार ही अन्धकार रहता है। **तो मेरे पुत्रो ! हमें संसार में त्यागमय अपने जीवन को बनाना है।** त्याग के क्षेत्र में जाना है। बिना त्याग के यह संसार कदापि ऊँचा नहीं बनता। बिना त्याग के महानता नहीं आती संसार में।

तो विचार–विनिमय क्या? मेरे प्यारे ! हम कई समय से तुम्हें आत्म–लोक की चर्चाएँ, पितृ–लोकों की चर्चाएँ करते चले जा रहे थे। बेटा ! **पितृ–लोकों की चर्चाओं में त्याग और तपस्या की प्रतिभा आती है।** मैंने एक समय अपने आचार्यों से, पूज्यपाद गुरुजनों से यह कहा कि यह संसार यदि तपस्वी बन जाय तो इसे दुखद अथवा अस्वात् नहीं होगा। मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी ने कई काल में प्रकट कराया कि आज का समाज कितना दुखी है? माता अपने पुत्र से व्याकुल है वह क्यों है? क्योंकि मेरा पुत्र मेरे समीप नहीं, चला गया। पति दुखित है पत्नी के लिए और पत्नी पति के लिए दुखित हो रही है। यह क्यों हो रहा है? इसका मूल कारण है कि मानव में तप की सूक्ष्मता जब आ जाती है तप नहीं रहता माता–पिता तपस्वी नहीं रहते तो पिता से पूर्व ही पुत्र का निधन हो जाता है। माता से पूर्व हो जाता है। वह दुःख का कारण बन जाता है। उसमें मानव व्याकुल होता रहता है। तो यह नहीं होना चाहिए।

**बाहरीय–जगत**

मुझे वह काल दृष्टिपात आता रहता है। महाराजा मनु के काल, राम के काल में पिता से पूर्व पुत्र का निधन नहीं होता था। क्यों नहीं होता था? क्योंकि प्रत्येक माता–पिता प्राण की क्रिया को जानते थे। संयम को अपने में धारण करते रहते थे। आज के काल

में विज्ञान ने बाहरीय जगत को धारण कर लिया है। **पुरातन काल में मुझे स्मरण है विज्ञान बाहरीय जगत में नहीं था।** बाहरीय जगत में जिस काल में नहीं रहता वह काल श्रेष्ठ होता है। और जिस काल में इस विज्ञान का बाहरीय जगत बन जाता है राष्ट्र की परम्परा समाप्त हो जाती है। राष्ट्र में स्वार्थवाद आ जाता है। बाहरीय जगत के आते ही मानव के जीवन में ''ब्रह्मचरिष्यामि समाप्तम'', उसमें धैर्य–धीरज, शान्ति नहीं रह पाती, संयम नहीं रह पाता। तो उसका परिणाम यह होता है कि उसका परमाणुवाद बिखर जाता है।

तो मेरे पुत्रो ! मैं चर्चा कर रहा था कि विज्ञान बुद्धिमानों के मस्तिष्कों में रहता है। यह क्रियाकलापों में रहता है। परन्तु रहता है। बुद्धिमानों के द्वारा जो गम्भीर बुद्धिमान होते हैं। ऋषि–मुनियों के मस्तिष्कों में यह विद्या परम्परागतों से रही है। कौन सी विद्या? वैज्ञानिक विद्याएँ, परमाणुवाद विद्याएँ, अणुवाद की विद्याएँ। मेरे प्यारे ! जितना भी भौतिक यन्त्रवाद है यह सब, उनका क्रियाकलाप उन ऋषि–मुनियों के द्वारा होता है। मैं आज यह पुरातन वार्ता को प्रकट करना नहीं चाहता हूँ।

## गन्धर्व–लोक

विचार–विनिमय यह कि बेटा ! मैं तुम्हें गन्धर्व लोकों में ले जाना चाहता हूँ कि गन्धर्व किसे कहते हैं? बेटा ! जब मानव पितृ लोकों से उपराम हो जाता है, महापिता इत्यादिओं की आज्ञा का पालन करके मानव के हृदय में शान्ति हो जाती है, मानव शान्तना को प्राप्त हो जाता है। क्योंकि वह पिता के ऋण से अऋण हो गया है वही तो मानव बेटा ! सुखद कहलाता है। यह जो आत्मा लोक के उद्देश्यों से पूर्ण हो गया है वही तो आनन्द को प्राप्त कर सकता है। तो मुनिवरो ! जब वह माता–पिता के ऋणों से अऋण हो जाता है तो मानव की अन्तरात्मा में प्रसन्नता होती है, उस मानव की अन्तरात्मा में एक प्रतिभा जागरूक हो जाती है। बेटा ! हमें यह विचारना है कि हम इससे उपराम हो गए हैं? अब गन्धर्व लोक के लिए गमन कर रहे हैं? **गन्धर्व लोक किसे कहते हैं?** दो प्रकार





के आचार्य संसार में कहलाते हैं। एक आचार्य गन्धर्व बुद्धिमान वह होते हैं जो बेटा ! सामान्य शिक्षा प्रदान करते हैं एक आचार्य वह होते हैं जो विशेष आत्मा का बेटा ! पवित्र भोजन है जिससे आत्मा तृप्त होता है मेरे पुत्रो ! देखो उस विद्या को वह प्रदान करते हैं। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय दिया कि **गन्धर्व नाम उन आचार्यों का भी है जिनकी बुद्धि प्रखर होती है जिनकी बुद्धि में महानता होती है, मेधावी होती है, प्रज्ञावी और ऋतंभरावी होती है।** चारों प्रकार की बुद्धि के तारतम्य में जिनके जीवन होते हैं वही मेरे प्यारे गन्धर्व कहलाते हैं। **गन्धर्व लोक बुद्धिमानों का लोक है।**

**बुद्धिमान कौन है बेटा?** जो अपने में प्रभु के आंगन में कोई अन्तर्द्वन्द्व जिनके हृदय में नहीं होता। बुद्धिमान उन्हें नहीं कहते हैं जिनका संकीर्ण विचार होता है। जिनमें संकीर्णता आ गई है, उन्हें बुद्धिमान नहीं कहा जाता। बुद्धिमान वह होते हैं जो बुद्धि को अपने में धारण कर लेता है। मेरे प्यारे ! ''धिः'' को अपने में धारण कर लेता है। जो परा विद्या पर चिन्तन करने वाली है। परा विद्या को धारण कर रही है और परा विद्या को ले करके मननशील जब मनन करता रहता है। मनन करता हुआ गन्धर्व गान कहलाता है गान गाता है उस काल में आत्मा लोक पवित्रत्व में और जब विष्णु के द्वार पर जाता है तो यह कौन ''बुद्धिप्रहः अमृता'' गान गाता है। नारद वीणा को ले करके समीप आता है, गन्धर्व गान गाता है। एक समय ऋषि–मुनियों ने कहा, यह गन्धर्व गान क्यों गाता है? नारद वीणा क्यों ले रहा है? तो उस समय यह कहा गया, वीणा कहते हैं चंचलता को और गन्धर्व कहते हैं मेरे प्यारे ! गान को। जब चंचलता समाप्त हो जाती है। तो गन्धर्व गान गाता है बुद्धि गान गाता है उस गान को जो श्रवण करता है बेटा ! वह मानव आत्मवेत्ता बन जाता है। तो मुनिवरो ! नारद नाम पर्यायवाची शब्दों में मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराया था। नारद नाम परमपिता परमात्मा का है वास्तव में तो, परन्तु यहाँ प्रकरण कहता है कि नारद

नाम मन को कहते हैं। यह मन नारद है और इसमें चंचलता है और जब मानव अपनी साधना में स्थिर हो जाता है, गन्धर्वों के द्वार पर चला जाता है तो उस समय यह नारद रूपी मन बेटा ! स्थिर हो जाता है और स्थिर हो करके यह वीणा को लेकर के उसके समीप वीणा–वादन करता है और कहता है प्रभु मैं चंचलता को त्याग रहा हूँ। त्याग कर के मुनिवरो ! यह एक रस बन जाता है। एक रस बन कर के ही मेरे प्यारे ! यह गन्धर्व गान गाता है उस काल में। नारद वीणा को लेकर के उसकी ध्वनि करता है। इसी प्रकार हम जब गन्धर्व लोकों के समीप जाते हैं तो गन्धर्व गान गाते हैं। गमन कर रहे हैं और ब्रह्मचारी उसको श्रवण कर रहा है। उसको अपने में धारण कर रहा है। तो मेरे पुत्रो ! देखो यह गन्धर्व लोक कहलाता है जहाँ बुद्धिमान मानव के कल्याण की चर्चा करते हैं। मानव के जीवन की आभा की चर्चाएँ कर रहे हैं।

मेरे पुत्रो ! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जहाँ **ऋषि–मुनियों की गोष्ठियाँ,** ऋषि–मुनियों का विचार–विनिमय होता रहता है। जहाँ ऋषि–मुनियों के मध्य में गन्धर्व विद्यमान होते हैं। गन्धर्व जब गान गाते हैं तो उसको साधारण, सामान्य दोनों उसको ग्रहण करते हैं। वह कौन सी विद्या को प्रदान करता है आचार्य? जैसे बेटा ! महर्षि सोम और आदि ऋषियों जैसे पिप्पलाद ऋषि महाराज थे। **पिप्पलाद ऋषि जब शिक्षा ब्रह्मचारियों को प्रदान करते थे** तो गन्धर्व सोम बन कर के ब्रह्मवेत्ता वहाँ आते रहते थे। ब्रह्मवेत्ता कौन? ब्रह्म के जिज्ञासु और ब्रह्म के जिज्ञासु जब पिप्पलाद ऋषि से कहते हैं कि महाराज ! हम ब्रह्म विद्या को पान करने के लिए आए हैं, हम जिज्ञासु हैं। वह कहते हैं आओ। परन्तु मेरे यहाँ तुम ब्रह्मचारी रहो। ब्रह्मचारी रहो और इसका पालन करो। जब यह कहते हैं तब वह ब्रह्मचारी अपने मन में विचारते हैं कि आज्ञा का पालन करना है। वर्षों–वर्षों तक उनका पालन करना है तो मुनिवरो ! वह गन्धर्व कहलाते हैं यह विचारते हैं कि यह बुद्धिमान कैसा जिज्ञासु है? जो





ब्रह्मचर्य का उपदेश देता है। वह बाल्य ऋषि कहते हैं। वह कहते हैं हे ऋषिवर ! हम तो ब्रह्मचारी हैं। उन्होंने कहा मेरे प्यारे ! ब्रह्मचर्य का अभिप्राय हमने जाना नहीं। ब्रह्मचर्य के नाना अर्थ माने जाते हैं। नाना रूपों में दृष्टिपात करते हैं बेटा ! ब्रह्मचर्य एक सूत्र है, एक मनका है।

उस समय गार्गी–कवन्धि बोले कि महाराज ! **हम जब निद्रा की गोद में चले जाते हैं तो उस समय हम ब्रह्मचारी कैसे रह सकते हैं?** हम उस चरि को जानना चाहते हैं। तो उस समय पिप्पलाद ऋषि कहते हैं 'ब्रह्माणि चक्राति देवष्याम् लोकः'' अर्थात् जब मनकों का सूत्र बन जाता है, माला पिरोई जाती है, माला में मनके पिरोए जाते हैं तो वह स्वतः ही गति करने लगते हैं। जिस प्रकार हे ब्रह्मचारियों परमपिता परमात्मा के सन्निधान मात्र से यह ब्रह्माण्ड गति कर रहा है। सन्निधान मात्र से ही प्रकृति अपने स्वभाव को प्राप्त हो जाती है। इसी प्रकार ऋषि कहता है हे ब्रह्मचारियों तुम भी स्वतः अपने स्वभाव को जानो। ब्रह्मचर्य का यथार्थ क्या है? रूप क्या है इन वाक्यों का? ऋषि कहता है कि जब ब्रह्मचारी पूर्ण कहलाता है तो वह अपने एक सूत्र को बना करके और अपने मनके नवीन बना–बना करके उस सूत्र में पिरो देता है। पुत्रो! जब ऋषि यह कहता रहता है तो आश्चर्य का वाक्य है। मुनिवरो ! पिप्पलाद ऋषि कहते हैं कि एक–एक श्वांस जो गति कर रहा है वह जो प्राण स्वरूप है उसके स्वरूप में पिरोते चले जाओ। यह जो श्वांस आता है, यह गमन कर रहा है। श्वांस आता है—ऊर्ध्वा में जा रहा है, ध्रुवा में आ रहा है। अर्थात् ध्रुवा और ऊर्ध्वा दोनों को विचारने से ही दोनों का विचार हो जायेगा तो उस समय देखो तुम ब्रह्मचारी बन जाओगे। तुम्हारा उसी सूत्र में मनका पिरोया जाता है। वह जो मनके पिरो रहे हो निद्रा उसमें व्याप्त नहीं होता परन्तु वह मनके पिरोये जा रहे हैं। जैसे मानव अपने आभूषणों को प्राप्त करता हुआ, शृंगारित होता हुआ अपने शृंगार में लिप्त रहता है, इसी प्रकार वह

जो श्वांस की कड़ी है, वह जो श्वांस का एक मनका है वह प्राण है। वह चेतना में पिरोया हुआ है। उस श्वांस के ऊपर जैसे हमारे यहाँ ऋषियों ने, पिप्पलाद ने कहा है।

तुम्हें प्रतीत है, **चाक्राणी गार्गी कहती है याज्ञवल्क्य से** कि महाराज मेरे भुजाओं में कमान आकृति है और उसमें तरकश है, उसका लक्ष्य क्या है? भगवन्! मैं उसको नहीं जान पायी। तो पिप्पलाद कहता है ब्रह्मचारियों से, हे ब्रह्मचारियों! गार्गी से महर्षि याज्ञवल्क्य ने यही निर्णय कराया था। तुम्हारा वह जो तरकश है वह प्राण है और मन रूपी जो कमान है अर्थात तरकश उस पर नियुक्त हो रहा है और मन का जब समन्वय होता है प्राण से तो जीवात्मा का एक ही लक्ष्य है और वह लक्ष्य ब्रह्म है। वह ब्रह्म को अपना लक्ष्य बनाकर के गति करता है। इसी प्रकार मेरे पुत्रो! पिप्पलाद ऋषि कहते हैं, हे ब्रह्मचारियो! तु ब्रह्मचारी रहो और ब्रह्मचारी क्या है? **चरि कहते हैं जो प्राण में परमाणु होते हैं वह चरि को एक सूत्र में पिरो देता है।** चरि को मनुष्य में धारण करा करके 'ब्रह्मः चरिष्यामि देवः' चरि नाम प्रकृति का है और ब्रह्म नाम परमपिता परमात्मा का है जो परमात्मा की चरि को जानता हुआ, चरि के अस्तित्व को जानता हुआ ब्रह्म में समाधिष्ट हो जाता है, वह ब्रह्मचारी है। ऋषि कहते है जाओ ब्रह्मचारी रहो। गऊ का पालन करो। वह गऊ रूपी इन्द्रियों का पालन कर रहा है। मेरे पुत्रो! वह एक सूत्र में अपने जीवन को पिरो रहा है, अपने एक–एक श्वांस को पिरो रहा है। एक–एक आभा को पिरो रहा है पुत्रो! इस प्रकार वह अपनी एक माला बना लेता है। उस माला को जब वह धारण करता है तो बेटा! वह ब्रह्म में ही समाधिष्ठ हो जाता है वह ब्रह्म में लीन हो जाता है। ब्रह्ममयी आभा में युक्तायुक्त प्रकट करने लगता है।

तो मेरे पुत्रो! विचार–विनिमय क्या? **गन्धर्व कौन है? बेटा!** गन्धर्व वह है जो हमें व्यापक ज्ञान देते हैं। हमें व्यापक वेद देते हैं जिस वेद की छाया में मानव रमण करता हुआ विवेकी बन करके इस सागर से पार हो जाता है।





आओ मेरे पुत्रो! मैं तुम्हें आज विशेष क्षेत्र में ले जाना नहीं चाहता हूँ। आज मैं तुम्हें ऐसे क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ। जहाँ ब्रह्मचारियों को, जिज्ञासुओं को आचार्य कहता है, ब्रह्मचारी रहो। तो मुनिवरो! वह क्यों कह रहा है? वह इसलिए कह रहा है क्योंकि इन्द्रियों का पालन नहीं किया गया। वहाँ इन्द्रियों को भी, चित्त की प्रवृत्तियों को एकाग्र नहीं किया गया। जब वह चित्त की प्रवृत्तियों को एकाग्र कर लेता है वही मेरे पुत्रो! उसका तरकश है, वही तो ब्रह्मचर्य है। वही उसका ब्रह्म है।

मुनिवरो! यह कौन शिक्षा दे रहा है? यह गन्धर्व लोकों में हमें जाने से प्राप्त होती हैं। जो गन्धर्व हमें शिक्षा देते हैं, वह ऐसे हमें करा देते हैं जैसे सूर्य की धूप है, छाया है। छाया और सूर्य दो वस्तु नहीं हैं। छाया आ रही है क्या उनके मध्य में दर्पण आ गया है? मुनिवरो! वही तो ब्रह्म से कुछ सूक्ष्मता, दूरी कर देता है। जैसे आत्म–लोक दर्पण है, पितृ लोक को मेरे प्यारे! हम स्वप्न कहते हैं और इसको हम छाया के रूप में दृष्टिपात करते हैं। जैसे छाया आ रही है और वह छाया सूर्य के साथ–साथ रहने वाली है, प्रकाश के साथ–साथ रहने वाली है। प्रकाश है तो छाया है। छाया है तो प्रकाश है। दोनों एक सूत्र के मनके माने जाते हैं। परन्तु विचार–विनिमय क्या कि वह एक छाया में ही रमण करने वाला ब्रह्म में अपने को स्वीकार करता रहता है।

बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब नाना बुद्धिमान–विद्यमान हो करके चिन्तन करते हैं अथवा मनन करते हैं। मुझे बेटा! वह काल स्मरण आता रहता है एक समय बेटा! महर्षि लोमश मुनि अपने आसन पर विद्यमान थे। **महर्षि लोमश मुनि के द्वार पर कागभुषण्ड जी आ गए।** महर्षि कागभुषण्ड जी आ गये तो दोनों का विवेचन प्रारम्भ होने लगा। महर्षि लोमश मुनि कहते हैं कागभुषण्ड जो, यह जो संसार कैसा सतो पिप्पलादी वाला संसार है? उस समय कागभुषण्ड जी कहते हैं कि हे भगवन्! हे ऋषिवर! हे ब्रह्मवेत्ता! आप तो ब्रह्म के मर्म को जानते हैं। आप तो चित्त

की प्रवृत्तियों को जानते हैं। उसके पश्चात् भी आप संसार की वार्ता प्रकट कर रहे हैं। परन्तु मैं यह उच्चारण अवश्य कर रहा हूँ कि मानव को अपने जीवन में मनुष्यत्व की प्रक्रियाओं को जान लेना चाहिए और जान करके ही हम अपने जीवन को सार्थक करते हैं।

मुझे ऋषिवर ! कागभुषण्ड जी कहते हैं 'काक' कहते हैं जो मैं और जो सांसारिक व्यापार में चंचल और कुशल हो। 'भुषण्ड' कहते हैं उन चंचलताओं को जो त्याग देता है तो 'भशण्ड अभ्रः वृत लोकम् ब्रही' अर्थात् वृत्तियों में प्रवेश कर जाता है उसे कागभुषण्ड कहते हैं। मैं कागभुषण्ड बन गया हूँ। मुझे आप कागभुषण्ड कहते हैं, और ऋषि भी कहते हैं, परन्तु उसके मूल में क्या है? तपस्या है, उसके मूल में शिक्षा है। जब आचार्यों की शिक्षा हमें प्राप्त हो गयी तो मानो चंचल–प्रवृत्ति हमारी स्थिर बन गई। **स्थिर प्रवृत्ति का बन जाना ही ज्ञान और विवेक कहलाता है।**

ऋषिवर, लोमश जी बोले मेरे वाक्य से तुम कागभुषण्ड जी दूरी चले गये हो। मेरा तारतम्य क्या है? यह संसार कैसा विचित्र है? इस संसार को जाना जाये। कागभुषण्ड जी बोले महाराज कि इस संसार को जानने के लिए ऋषि–मुनियों ने बहुत प्रयास किया है। परन्तु जानते हुए अन्त में वह मौन हो गये। इसीलिए आप भी मौन होना चाहते हैं? **अन्त में एक ही मार्ग मानव को प्राप्त हुआ है कि जिस मार्ग पर तपस्वी पुरुष चले हैं उस मार्ग को अपनाना हमारा परम कर्त्तव्य है।** उसमें मानव को भ्रमित नहीं होना चाहिए।

अहा ! मेरे पुत्रो ! जब उस समय कागभुषण्ड जी ने कहा तो उस समय लोमश मुनि बोले कि कागभुषण्ड जी तुम्हारा वाक्य महान प्रिय है, तुम्हारा वाक्य यथार्थ है। परन्तु मेरे विचार में तो यह संसार जो आया है यह संसार क्या है? यह प्रसंग हमारे समीप है। मेरे समीप संसार में जो कुछ वार्तायें आयी हैं, यह संसार ऐसा है, जैसे छायावाद हो रहा है। संसार के क्षेत्र में जो मानव गति करता रहता है, कृतियों में रमण करता रहता है वह इस संसार को जान लेता है। इस संसार को जानने का प्रश्न भी बहुत अनिवार्य है। जो इस





संसार को नहीं जानता वह मानव परलोक को भी नहीं जानता। जो इस संसार के तथ्यों को नहीं जानता, वह ब्रह्म को भी नहीं जानता। क्योंकि यह संसार कागभुषण्ड जी ! ब्रह्म में पिरोया हुआ है। परन्तु देखो जब हम ब्रह्म को जान लेते हैं, ब्रह्म हमारे आंगन में आ जाता है हम उस गन्धर्व लोकों में रमण करते हुए, उसकी आभा को प्राप्त करते रहते हैं।

जब लोमश जी ने कहा तो कागभुषण्ड जी के चिन्तन में वह वाक्य आ गया। दोनों ऋषि चिन्तन करते थे। कहीं सूर्य के ऊपर चिन्तन हो रहा है। कहीं जल के ऊपर हो रहा है, कहीं अग्नि के ऊपर हो रहा है। कहीं अन्तरिक्ष में शब्दों के ऊपर चिन्तन हो रहा है। कहीं गन्धर्व और पितृ लोकों के सम्बन्ध में चिन्तन हो रहा है। गन्धर्व लोकों का चिन्तन जब दोनों का प्रारम्भ होता था तो वह गन्धर्व उन्हें कहा करते थे जो इस पृथ्वी से उड़ान उड़कर के दूसरे लोकों में गति करते रहते थे। जो ऋषि–मुनि समाधिष्ठ हो करके सर्वत्र ब्रह्माण्ड को क्रिया में लाना जानते थे। उन्हें तब गन्धर्व कहा जाता है और उन्हीं के चरणों में ओत–प्रोत हो करके मानव अपने आभा को प्राप्त करता है और अपने मानवीयता को ऊँचा बनाता है। अपनी महत्ता में रमण करता हुआ इस सागर से पार होने का प्रयास करता है।

परिणाम क्या? मुनिवरो ! गन्धर्व किसे कहते हैं? यह विचार हमारे समीप बारम्बार आता रहता है। **गन्धर्व उन्हें कहते हैं बेटा ! जो आध्यात्मिकवेत्ता होते हैं। आध्यात्मिकवाद की शिक्षा देते हैं।** वह भौतिकवाद को आध्यात्मिकवाद के ऊपर न्यौछावर कर देते हैं। जैसे मुझे स्मरण है बेटा ! एक समय **महर्षि गोकलित ऋषि महाराज** जो हरित वंश में उत्पन्न हुए थे। गोकलित ऋषि महाराज एक समय भयँकर वनों में विराजमान थे। और अकाल पड़ गया। जब अकाल पड़ने लगा तो संसार में त्राहि–त्राहि होने लगी। उस समय गोकलित ऋषि महाराज ने यह विचारा कि मैं इसको कैसे समाप्त करूँ? यह अकाल कैसे समाप्त हो? गोकलित ऋषि महाराज ने भयँकर वन

में, हिमालय की कन्दराओं में मेरे पुत्रो ! उन्होंने कुछ साकल्य एकत्रित किया और साकल्य एकत्रित करके अपने मन को तपस्वी बना करके संकलन मात्र से वृष्टि याग बनाया। वृष्टि याग की रचना की। जब रचना की तो जैसे ही याग होने लगा तो वृष्टि भी प्रारम्भ होने लगी।

वह जो ऋषिवर होते हैं वह परमाणुवाद पर अपनी वाणी को संयम में करते हुए, भौतिकवाद को भी आध्यात्मिकवाद पर न्यौछावर कर देते हैं। वह कहते हैं कि यह सब आध्यात्मिकवाद है। **सर्वत्र आध्यात्मिकवाद है।** जो भी मानव भयँकर वन में जाना चाहता है, आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करना चाहता है वह भौतिकवाद के संसार में तन–मात्राओं को प्राप्त करके ही आगे आध्यात्मिकवाद को प्राप्त करता है। **आध्यात्मिकवादी पुरुष भौतिकवाद में रमण करता हुआ आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता है।** वही परमज्ञानी है। वह परम प्रकाश को जानने के लिए तत्पर हो गया है। उन महापुरुषों को गन्धर्व कहते हैं।

**अरे ! गन्धर्व कौन है? जो आध्यात्मिकवेत्ता होते हैं, जो ब्रह्म की शिक्षा देते हैं, जो ब्रह्मज्ञान देते हैं, वह सर्वत्र दानी होते हैं।** एक द्रव्यपति है जो द्रव्य का दान दे रहा है। वह द्रव्य को सदुपयोग में लगा रहा है। एक वह मानव है जो मेरे प्यारे ! विद्या को निगलता है। वह ऐसे द्रव्य को एकत्रित करता है जिसका संसार में अभाव नहीं होता। एक द्रव्य है उसका रूपान्तर करके अभाव हो जाता है। परन्तु यह जो ब्रह्मविद्या है यह ऐसा उपार्जन, ऐसा द्रव्य है, ऐसा महान कर्म है बेटा ! जितना भी द्रव्य को दे दो, वह समाप्त नहीं हो सकता है। यह जो विद्या है, यह जो ब्रह्मज्ञान है, ब्रह्म का उपदेश है मुनिवरो ! जितना तुम दूसरों को प्रदान करोगे उतना बलवती होता जायेगा। उतना ही प्रबल होता चला जायेगा।

इसीलिए मुनिवरो ! यहाँ ब्रह्मचारियों को सबसे प्रथम यही कहा जाता है, हे ब्रह्मचारियो ! तुम उस विद्या को ग्रहण करो जिसका कोई भी संसार में बँटवारा नहीं कर सकता। तो **यह ब्रह्मविद्या ऐसी**





**विद्या है बेटा ! जिसका संसार में कोई बँटवारा नहीं कर सकता।** इसका जितना तुम बँटवारा करते रहोगे, उतना तुम सूक्ष्म, तीव्र बुद्धि बनते चले जाओगे, उतने ही गन्धर्व बनते रहोगे। गन्धर्व लोकों में रमण करते रहोगे। तो मेरे पुत्रो ! हमें विचार–विनिमय करना है कि हम गन्धर्व लोकों को प्राप्त होना चाहते हैं। गन्धर्व बनना चाहते हैं। बेटा ! **गन्धर्व कौन है? जो ब्रह्मविद्या को प्रदान करते हैं जो इस लोक से दूसरे लोकों का निर्णय कराते हैं।**

## कवच को धारण करें

वह जो ब्रह्म सूत्र है इस ब्रह्म सूत्र में यह संसार ओत प्रोत हो रहा है। यह ब्रह्म सूत्र कहलाता है। हमारे यहाँ यज्ञोपवीत को भी ब्रह्म सूत्र कहते हैं क्योंकि वह त्रि–विद्या को प्रदान कराता है। त्रि–विद्या की प्रेरणा देता है। तो इसीलिए पुत्रो ! उसे ब्रह्म सूत्र अथवा ब्रह्मपाश कहते हैं। जिस प्रकार मेरे प्यारे ! त्रेता के काल में अंजनापुत्र महाराजा हनुमान जब रावण की वाटिका में पहुँचे तो रावण ने उस ब्रह्मसूत्र में ही हनुमान जी को कटिबद्ध कर लिया। ब्रह्मसूत्र को नष्ट नहीं कर सके क्योंकि ब्रह्मसूत्र यज्ञोपवीत कहलाता है। जो यज्ञ के कवच को धारण कर लेता है उसको संसार में कोई मृत्यु को प्राप्त नहीं करा सकता। **यत्रोपवीत एक कवच कहलाता है बेटा !** जैसे देवी का पूजन करने वाला देवी के कवच को धारण कर लेता है और सन्ध्या करने वाला सन्धि के कवच को धारण कर लेता है। जो इन कवचों को धारण करता है मेरे प्यारे ! दूषितता उनके समीप नहीं आती।

मैं कवचों की चर्चा तो वेद का पठन–पाठन आएगा तो करूँगा किसी काल में। आज तो केवल तुम्हें यह उच्चारण करने के लिये आए हैं कि **हमें कवच को धारण करना है।** कवच को अपनाना है और वह कवच क्या है? जिसको अपनाना है। मुनिवरो ! कई प्रकार के कवच होते हैं। जैसे क्षत्रिय जो संग्राम करने वाला होता है वह कवच को धारण करता है और वह कैसा कवच है? वह

उस कवच को धारण करके शत्रु की सेना में संग्राम करता है इसी प्रकार राजा जब प्रजा रूपी कवच को धारण कर लेता है तब वह राजा कहलाता है। योगी जब चित्त की प्रवृत्तियों रूपी कवच को धारण कर लेता है तो वह योगी बन जाता है। इसी प्रकार चित्त की प्रवृत्तियों रूपी कवच को धारण करने वाले बनो। यही है बेटा ! हमारा ''महः अप्रः लोकः, वेदाम् व्रीही लोकः रूद्र लोकः''। नाना प्रकार के लोकों की चर्चाएँ आती रहती हैं। बेटा ! जब विज्ञान रूपी कवच को मानव धारण कर लेता है वह अपने यानों पर विद्यमान हो करके दूसरे लोकों को प्राप्त होता है। परिणाम क्या? यहाँ यह संसार एक कवच के आंगन में विद्यमान है। मेरे पुत्रो ! **आत्मा भी यज्ञ रूपी कवच को धारण किए हुए रहती है।**

मैं इस क्षेत्र में विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार–विनिमय क्या है? विचार यह चल रहा था ऋषिवर जब याग करने लगा तो वृष्टि प्रारम्भ हो गई। मेरे प्यारे ! हनुमान को जब रावण ने ब्रह्मसूत्र में बाँध लिया तो उसको वह नष्ट नहीं कर सके। क्योंकि वह सूत्र होता है उसको कोई भी मानव नष्ट नहीं कर सकता। मेरे प्यारे ! ब्रह्मपाश रूपी एक यन्त्र भी उनके द्वारा था, जिस यन्त्र में से हनुमान निकल नहीं सकते थे। ब्रह्म–सूत्र एक धर्म का प्रतीक कहलाया जाता है। वह अपने से दूरी धर्म को नहीं कर सकता। आज कोई मानव यह कहे मैं धर्म को नहीं मानता हूँ। मैं धर्म को नहीं स्वीकार कर रहा हूँ। अरे ! धर्म से कोई मानव दूरी नहीं है। धर्म के कवच को सबने धारण किया हुआ है। मुनिवरो ! वह परमात्मा को स्वीकार करने वाला हो या न हो, परन्तु वह धर्म को अपने से दूरी नहीं कर सकता धर्म ही मानव का प्राण है। वही कवच है। मेरे पुत्रो ! धर्म ही ईश्वर है धर्म ही सत्य है। सत्य को धारण करने वाला इस संसार से पार हो जाता है।

आज का विचार विनिमय क्या? मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। महाराज हनुमान उस ब्रह्म–पाश को, जिसको हम यज्ञोपवीत कहते हैं। यज्ञ के समीप विद्यमान हो जाते हैं यज्ञ





का हमें अधिकार प्राप्त हो जाता है। ब्रह्म–सूत्र को धारण करने वाला मानव राष्ट्रीय ध्वज कहलाता है और वह जो उसको धारण करता है उसके फांस में फंस जाता है। जब कवच को लेकर राष्ट्रीय धारा में जाता है तो राष्ट्र भी उस कवच को धारण करके राष्ट्रीयता वाला कहलाने लगता है।

**मुनिवरो ! ब्रह्मपाश क्या है?** ब्रह्म–पाश रूपी एक यन्त्र भी होता है। जो ब्रह्म का हमें ज्ञान कराता है ब्रह्म–वेत्ता बना देता है। उस विद्या का नाम ब्रह्म–पाश कहा जाता है। जिससे मानव निकल नहीं सकता। ब्रह्म विद्या से दूरी कहाँ जाओगे? **ब्रह्म विद्या ही तो मानव बनाती है। विवेकी बना देती है।** और मेरे प्यारे ! गन्धर्व देवता वह कहलाते हैं जो ब्रह्म में हमें जिज्ञासु बना देते हैं। बेटा ! गन्धर्व लोकों के पश्चात् ब्रह्म लोकों की चर्चाएँ आती हैं। समय मिलेगा तो शेष चर्चाएँ मैं कल प्रकट करूँगा।

**आज का वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि प्रत्येक मानव अपने धर्म रूपी कवच को धारण करके, सन्ध्या रूपी कवच को धारण करके, दैवी सूत्रों को कवच बना करके अपने कर्त्तव्य का पालन करते चले जाओ और गन्धर्व लोको को अपनाते चले जाओ।** गन्धर्व लोक ऐसा है जैसे छाया है, छाया का जो प्रकाश है वह ब्रह्म का है। ब्रह्म की चर्चाएँ इसके आगे चर्चाओं में वेद के पठन–पाठन का समय प्राप्त होगा तो कल प्रकट करेंगे। आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पाठ होगा।

वेद पाठ.....।

अच्छा भगवन्!

आनन्दवत् रहो!

**दिनाँक : 6 अगस्त, 1977**

**समय : रात्रि 8.30 बजे**

**स्थान : महाशय कृष्ण हाल**
**जोरबाग, नई–दिल्ली**

।। ओ३म् ।।

# ऋणों से उऋण होने का मार्ग

जीते रहो !

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन–पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन किया जाता है। क्योंकि इसका ज्ञान और विज्ञान इतना महान और अनन्त माना गया है जिसको कोई भी मानव सीमाबद्ध नहीं कर सकता क्योंकि वह सीमा से सदैव रहित है। तो मुनिवरो ! उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान की आभाएँ तुम्हें प्रायः प्रकट हम कराते रहते हैं। वेद पाठ आता रहता है और ज्ञान और विज्ञान की विवेचनाएँ आती रहती हैं। हमारा प्रत्येक वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है अथवा उसका वर्णन कर रहा है।

**मनस्तत्त्व और प्राणस्तत्व**

जब हम उस परमात्मा को अपने वरणीय स्वीकार कर लेते हैं तो हमारे जीवन में, हमारी क्रियाओं में एक महान आनन्द हमें प्रतीत होने लगता है। क्योंकि हमारे ऋषि–मुनियों ने परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान के विषय में बहुत परिश्रम किया। उन्होंने बेटा ! अपने मनस्तत्त्व, प्राणस्तत्व दोनों को एक सूत्र में लाते हुए अपने को समाधिष्ठ किया। और समाधिष्ठ में संसार का जितना भी ज्ञान है अथवा जितना भी वह ज्ञान पाता है वह उतने में कुछ लेखनीबद्ध करके चला जाता है। क्योंकि ऐसे नाना ऋषि हुए हैं जिन्होंने भौतिक विज्ञान, आध्यात्मिक





विज्ञान दोनों के ऊपर नाना टिप्पणियाँ ही नहीं कीं, उन्हें जानने का प्रयास भी किया और उनके जीवन का एक रहस्य रहा है कि वह मनस्तत्त्व, प्राणस्तत्व दोनों को एक सूत्र में ला करके क्योंकि यह मन प्रकृति का प्रतिनिधित्व करने वाला है और जो प्राणस्तत्व है इसको अन्तिम सूत्र में आचार्यों ने **प्रणव** कहा है, मानो यह ब्रह्म का वाचक, उसकी जो आभा निर्णित कराता है वह प्राणस्तत्व कहलाता है। परन्तु आज मैं इस सम्बन्ध में भी इतनी गम्भीरता में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार–विनिमय केवल यह कि हमारे ऋषि–मुनियों ने बेटा ! लोक–लोकान्तरों की यह एक ही सूत्र में जो मालाएँ हैं, लोक–लोकान्तरों की जो माला है इसको ऋषियों ने अपने मस्तिष्क में धारण किया है और इसको जानने का प्रयास किया। उन्होंने समाधिष्थ हो करके एक नहीं, दो नहीं, अरबों, खरबों, सूर्य ही सूर्य की गणनाएँ की हैं। इसी प्रकार चन्द्र लोकों की गणनाएँ की हैं। और भी नाना प्रकार के मण्डलों को जानने का प्रयास किया।

**ब्रह्मयाग**

एक समय का वाक्य मुझे स्मरण आ गया है। **एक समय बेटा ! हम अपने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में ओत–प्रोत थे।** कुछ अध्ययन कर रहे थे कुछ उनसे यौगिक चर्चाएँ प्रारम्भ हो रही थीं तो पूज्यपाद गुरु से यह प्रश्न किया कि प्रभु ! आपने यह कैसे जाना है? जो इतने ब्रह्माण्ड को आप चर्चाएँ करते हैं, इतने गम्भीर ! आज इस संसार को अनुभव भी नहीं होने देते कि यह संसार क्या है? परन्तु आपका ऐसा जो विचित्र यह अनुपम जगत है। यह जो विचारों का जगत है प्रभु ! इसमें आप हमें ले जाते हैं। उन विचारों के जगत में कौन सी आभा है? और कैसे आपने इसे जाना है? परन्तु **पूज्यपाद गुरुदेव यह कहा करते थे कि जो भी मानव संसार में विचारक बनना चाहता है वह प्रातःकाल एक याग करता है उस याग का नाम हमारे यहाँ ब्रह्मयाग कहा जाता है अथवा ब्रह्म का चिन्तन किया जाता है।** ऊषा काल में ऊषा देवी अपनी लालिमा ले करके आती है। संसार में प्रकाश को लेकर आता है। उस समय

प्रत्येक मानव ब्रह्म का चिन्तन करता है और जैसे रात्रि और दिवस दोनों का मिलान होता है उस काल में अपने मनस्तत्त्व—जहाँ ऊषा काल आता है, वहाँ जहाँ अन्धकार और प्रकाश का मिलान होता है ऐसा जो काल उसको हमारे यहाँ मुनिवरो ! सन्ध्या का काल कहते हैं। उसे सन्ध्या का काल क्यों कहते हैं? क्योंकि उसमें प्रकाश और अन्धकार दोनों का मिलान होता है। प्रातःकाल को भी और साँयकाल को भी बेटा ! विचारक जो ब्रह्मवेत्ता हैं अथवा जो ब्रह्म का चिन्तन करने वाला है वह ब्रह्म का चिन्तन करने के लिए तत्पर होता है और वह विचारता है—इसी प्रातःकाल को और वह चिन्तन करता है लोक–लोकान्तर की मालाओं को और मेरे प्यारे ! वह गम्भीर एक अगाध समुद्र में चला जाता है इतनी अगाध आभाओं में रमण करने लगता है क्योंकि ब्रह्म ही एक चैतन्य है। ब्रह्म की जो चेतनता है, ब्रह्म का जो चेतन्यमयी स्वरूप माना गया है मेरे प्यारे ! **प्रातः काल उसे ब्रह्मयाग कहते हैं अथवा ब्रह्म का चिन्तन कहते हैं।** वह कहता है हे प्रभु ! मैं आपको समर्पित हो गया हूँ। उस समर्पणता के आँगन में हमें धारण कराइये प्रभु !

## ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है

तो मेरे प्यारे ! विचार विनिमय क्या आज मैं तुम्हें यह विचार देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को ब्रह्म का चिन्तन करना है, ब्रह्म में ही रमण करना है। उसे मुनिवरो ! ब्रह्म याग कहते हैं। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? बेटा ! जो ब्रह्म का जिज्ञासु है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? जो अपने को बनाना चाहता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? जो स्वर्ग में जाना चाहता है। आनन्द को प्राप्त करना चाहता है। मेरे प्यारे ! ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? ब्राह्मण करता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? ब्रह्मचारी करता है। ब्रह्म का चिन्तन कौन करता है? मेरे प्यारे ! जो समाधि लगाने वाले महापुरुष होते हैं। विचार विनिमय क्या मुनिवरो ! जो माता–पिता यह चाहते हैं कि हमारा गृह आनन्दमयी हो जाए। हमारे गृह में स्वर्ग भी हो, आनन्द भी हो, प्रकाश भी हो





तो मेरे प्यारे ! प्रत्येक माता–पिता का यह कर्त्तव्य है कि अपने गृह में ब्रह्म का चिन्तन करने वाला हो। ब्रह्म का मनन करने वाला हो। जो माता–पिता अपने में तो कुछ बनाना नहीं चाहते और अपने गृह में, जो बाल्य–बालिकाएँ हैं उनको स्वर्ग में ले जाना चाहते हैं तो यह मिथ्या उनकी कल्पना रहती है।

आज का हमारा विचार क्या ! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जहाँ ऋषि और ऋषि पत्नियों ने चिन्तन किया है, मनन किया है। जिनके आश्रम में रहने वाले ब्रह्मचारी ब्रह्म की चरि को ही चरते रहते हैं। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है; एक ऋषि थे जिनका नाम **सन्तोषी ऋषि महाराज** था। सन्तोषी ऋषि महाराज, महाराजा अश्वपति के पुरोहित थे। जब वह प्रातः काल पति–पत्नी दोनों ब्रह्म का चिन्तन करते थे तो उनकी समाधि लग जाती थी। निर्विकल्प समाधि में अभ्यस्त हो जाते। उनके यहाँ कुछ ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, कुछ ब्रह्मचारिणियाँ थीं तो उनको निर्विकल्प समाधि में मग्न करते हुए दृष्टिपात करते तो ब्रह्मचारी विद्यालय में जब उसी प्रकार का चिन्तन करते रहते तो विद्यालय स्वर्ग बन जाते। विद्यालयों में महत्ता का सदैव प्रदर्शन होता रहता। महानता में रहते मुनिवरो ! यह विभोर हो जाते और समाधि में जा करके ब्रह्म की आभा में रमण करते रहते। महर्षि सन्तोषी मुनि महाराज अश्वपति के पुरोहित भी थे, विद्यालय में आचार्य भी थे। विद्यालय में ब्रह्मचारियों को अध्ययन भी कराते रहते। उनकी आभा ब्रह्मचर्य में और ब्रह्म के चिन्तन में रहती। ब्रह्म के चिन्तन में अपने को महान बनाते हुए, ऊर्ध्वा बनाते हुए संसार की आभाओं में रमण करने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। आओ मेरे पुत्रो ! आज मैं तुम्हें कहाँ ले गया हूँ। ब्रह्म का चिन्तन करने वाले पति–पत्नी प्रातःकालीन, मध्य रात्रि होती तो प्रभु के आंगन में जाने के लिए उनका आत्म विभोर होना स्वभाविक था। क्योंकि वह कहा करते थे हे प्रभु ! यह जो तेरा आनन्दमयी जगत है इसको हम कैसे जानें? इसको कैसे जान सकते

हैं? आप की जो अनन्त सृष्टि है, जो ब्रह्माण्ड है उसको जानने में प्रभु ! मैं सदैव असमर्थ रहता हूँ। हे भगवन् ! आप तो महान् हैं। आप तो विचित्र कहलाते हैं। यह जो माता–पिता हैं ब्रह्म का चिन्तन करते रहते हैं वहाँ रहने वाले बाल्य, बालिकाएँ वह जो श्रवण करते हैं तो उनका आश्रम, उनका गृह चाहे वह गृह–आश्रम में प्रवेश होने वाले हों, चाहे वह विद्यालय में हों चाहे वह राजा के यहाँ पुरोहित क्यों न हों परन्तु वह जहाँ भी जाते हैं वह स्वर्ग की कल्पना करते हैं। आनन्द की पुकार करते हैं।

मेरे प्यारे ! **आनन्द मानव के हृदय से सम्बन्धित है।** मानव का हृदय ही उसका आनन्द है। इस आनन्द को पान करना मानव का कर्त्तव्य कहलाया गया है। एक आनन्द को पान करना ही उस मनस्तत्त्व और प्राणस्तत्व दोनों को एक आभा में ले जाना है। परन्तु देखो प्रातःकालीन जब वह ब्रह्म का चिन्तन करते उसे ब्रह्म याग कहते हैं। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा इन यागों का अभिप्राय यह है ''यागम् ब्रह्म लोका प्रभु के विभोर में जो मानव जागरूक रहता है वह याग को करता है। यागी कौन है? मेरे पुत्रो ! यागी कहते हैं जो याग करता है और याग कौन करता है बेटा ! जो ब्रह्म का चिन्तन करता है। जो ब्रह्म का मनन करता है।

## महाराजा अश्वपति द्वारा ऋषि–मुनियों को याग के लिए आग्रह

मेरे पुत्रो ! मुझे स्मरण आता रहता है एक समय महाराजा अश्वपति के मस्तिष्क में एक वाक्य आया कि मुझे अपने राष्ट्र को स्वर्गमयी, आनन्दमयी बनाने के लिए एक याग करना है। मुनिवरो ! उन्होंने ऋषि–मुनियों की सभा एकत्रित की और उन ऋषियों में बेटा ! एक ऋषि का नाम था महर्षि कुकरोटक ऋषि महाराज। कुकरोटक ऋषि महाराज ने कहा राजन् ! हमें किस प्रकार तुम ने एकत्रित किया? उन्होंने कहा कि मैं अपने राष्ट्र में याग करना चाहता हूँ क्योंकि मेरा जीवन ही याग है। मैंने अपने में यह विचार लिया कि मेरे जीवन में याग ही होते रहते हैं। यदि मैं वास्तव में याग





को करना चाहूँगा मेरा याग इतना महान हो सकता है कि मैं संसार का याज्ञिक बन करके प्रभु को अपने को समर्पित कर सकता हूँ।

## ऋषि मुनियों द्वारा ब्रह्मयाग की विवेचना

मेरे पुत्रो ! जब उन्होंने यह कहा तो ऋषि कहते हैं—महर्षि विभाण्डक और महर्षि कुकरोटक एक स्वर में बोले हे अश्वपति ! आप याग तो करना चाहते हैं, याग की आपको कल्पना है परन्तु आप ब्रह्म याग भी जानते हैं अथवा नहीं? उन्होंने कहा प्रभु ! ब्रह्म याग तो मैं कुछ जानता हूँ, कुछ नहीं जानता। ऋषियों ने कहा कितना जानते हो? उन्होंने कहा मैं इतना जानता हूँ कि प्रातःकाल, सायँकाल को मैं जब भी जागरूक होता हूँ। मैं जब भी अपने को जागरूक करना चाहता हूँ तो प्रभु में ध्यानावस्थित हो जाता हूँ। प्रभु की महिमा पर विचार– विनिमय करने लगता हूँ और प्रभु का विचार विनिमय करने से मेरा याग मेरे को आनन्दित कर देता है। मैं इतना याग करना जानता हूँ केवल।

ऋषि विभाण्डक कहते हैं। हे राजन् ! तुम वास्तव में याग के मार्ग को जानना चाहते हो। तुम्हारा यह जो याग है वह ब्रह्म जो याग है जो मानव करता है जिसमें मानव की एक–एक इन्द्रिय इसमें समर्पित होती है। **प्रत्येक इन्द्रियों के विषय को जानना हो तुम्हारा याग कहलाता है** क्योंकि प्रत्येक इन्द्रियों का जो विषय है जैसे, रूप, रस, गन्ध कहलाता है, इन विषयों में सर्वत्र मानव की आभा निहित रहती है और यही याग का साकल्य कहलाता है और यही ब्रह्मयागी बनने के लिए साकल्य कहलाता है। उन्होंने कहा प्रभु कैसे? कहा जैसे नेत्र हैं, जैसे ध्राण इन्द्रियाँ हैं यह एक–एक विषयों में ब्रह्म की गाथा गाती हैं। एक स्वर है उस स्वर में भी ब्रह्म की गाथा गा रही हैं। सूर्य और चन्द्र हैं यह भी गाथा गा रहे हैं। एक अश्वनी है, ध्रति है, जमदाग्नि इत्यादि भी गाथा गा रही हैं विश्वामित्र भी ब्रह्म की गाथा गाते हुए विषयों को जानना, महान प्रतिभाओं को जानना, तेजोमयी का इनमें रहस्य भरा हुआ है। साकल्य को जानना उनको जान करके अग्न्याधान करना है। अग्न्याधान करके जो उसमें

आहुति देता है, स्वाहा कहता है वह ब्रह्मयाग कर रहा है। वह देव याग नहीं वह वृक्ष याग कर रहा है। क्योंकि **ब्रह्मयाग मानव अपनी इन्द्रियों से करता है** वह इन्द्रियों में जो साकल्य है। इन्द्रियों का साकल्य क्या है? मेरे प्यारे ! नेत्रों का साकल्य रूप है, श्रोतों का शब्द है। त्वचा का वायु है इसी प्रकार मेरे प्यारे ! अग्नि इत्यादि हैं। इस सर्वत्रता को जानना ब्रह्माण्ड का साकल्य कहलाता है। ऋषि–मुनि इस साकल्य को एकत्रित करके ब्रह्म याग करते हैं; ब्रह्म आहुति देते हैं। **ब्रह्म में आहुति क्या?** प्रत्येक इन्द्रियों को ब्रह्म में, आत्म तत्व में समर्पित करके ब्रह्म की आभा में जाना ही मेरे प्यारे ! ब्रह्म याग कहलाता है।

आओ बेटा ! मैं आज तुम्हें यह चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हमें ब्रह्म याग करना है। हम ब्रह्म का चिन्तन करने वाले बनें। ब्रह्म का चिन्तन करने वाले स्वर्ग में जाते हैं। ब्रह्म–लोक में जाते हैं। वह इस ब्रह्माण्ड को अच्छी प्रकार जानते रहते हैं। आओ मेरे प्यारे ! सबसे प्रथम हमारे यहाँ ब्रह्म का चिन्तन हो। ब्रह्म के चिन्तन के साथ ही हमारा आत्म–चिन्तन भी प्रारम्भ होता है। परन्तु **आत्म–चिन्तन और ब्रह्म चिन्तन दोनों एक ही सूत्र में पिरोने से ब्रह्मयाग बन जाता है।**

## महाराजा अश्वपति को याज्ञिक बने रहने की प्रेरणा

उसके पश्चात् द्वितीय जो याग है। हमारे यहाँ देवयाग कहलाता है। देवयाग करने वाला बेटा ! मैं अश्वपति की चर्चाएँ कर रहा था। महाराजा अश्वपति को जब विभाण्डक आदि ऋषियों ने यह निर्णय कराया तो राजा ने कहा प्रभु ! मैं ऐसा ही प्रयत्न कर रहा हूँ। भगवान् मनु ने जब राष्ट्र का निर्माण किया था। मैंने इस विद्या को श्रवण किया और अध्ययन किया है। मैंने यह जाना है कि जब तक राजा स्वयं याज्ञिक नहीं होगा, मांगलिक नहीं होगा वह प्रजा को सुन्दर कदापि नहीं बन सकेगा। क्योंकि कर्त्तव्य में लाने के लिए मानव को मानव बनाने के लिए मानवीयता, राष्ट्रीयता हो क्योंकि दोनों का सम्बन्ध, दोनों एक ही सूत्र के मनके कहलाते हैं। तो मेरे





प्यारे ! इसीलिए ऋषि–मुनियों ने यह कहा है कि राष्ट्र को राजा ऊँचा बनाना चाहता है तो स्वयं ऊँचा बनने का प्रयास करे। प्रजा को सुखद बनाना चाहता है तो याग कर्म करने वाला हो। क्योंकि जिस कर्म को महापुरुष करते हैं उसी कर्म में प्रजा लग जाती है और जिस कर्म में प्रजा लग जाती है वह उसका कर्म और कर्त्तव्य बन जाता है और वही स्वर्ग और नर्क कहलाता है। स्वर्ग तो इसीलिए है कि जो राजा याग करता है और कहता है कि ऋण से उऋण होना है। प्रत्येक मानव प्रत्येक देवकन्या से यह कहा जाता है कि तुम्हें ऋण से उऋण होना है।

ऋणों की विवेचना तो मैं कल के काल में दूँगा। केवल अब तो परिचय दे रहा हूँ। परिचय क्या है कि ऋणों से उऋण होना है। जब ऋणों से उऋण होने के लिए राजा प्रेरित होता है। प्रजा में कर्त्तव्य का पालन करता है तो जब राजा ऋणों से उऋण होने का प्रयास करता है तो प्रजा भी करती है। जब एक दूसरे का मानव ऋणी नहीं रहता है तो मानव में सुखद और शान्ति की स्थापना हो जाती है। क्योंकि मानव जब तक ऋणी बना रहता है तो सुखद और शान्ति की स्थापना नहीं होती। सुखद और शान्ति वही मानव प्राप्त करता है जो कर्त्तव्यवादी होता है, महान होता है। तो इसीलिए ऋषि–मुनियों ने कहा, हे राजन् ! यदि तू अपने को और प्रजा को महान बनाना चाहता है तो तुझे महान बनना ही होगा और महान तू कैसे बनेगा? महान उस काल में बनेगा जिस काल में तू याज्ञिक होगा, मांगलिक होगा क्योंकि याग कर्म करना ही तेरा मुख्य उद्देश्य है जैसे राजा का एक–एक श्वांस, एक–एक शब्द प्रजा के लिए होता है। जैसे राजा का एक–एक कर्म, विचार ब्रह्म विचार होगा तो वह राष्ट्र के लिए होगा। देखो यदि याग कर्म होगा, तो वह भी राष्ट्र के लिए होगा क्योंकि राजा जैसा बरतता है वैसा ही प्रजा बरतती है। जैसे प्रजा बरतने लगती है वैसा ही राज्य मण्डल होता है, वायु मण्डल होता है और जैसा ही वायु मण्डल होता है

वैसे ही देवता होते हैं जैसे देवता होते हैं वैसे ही यह ब्रह्माण्ड, यह विचार एक सूत्र में पिरो करके बेटा ! परम आनन्द को प्राप्त होता है।

## ऋषियों द्वारा यज्ञशाला का निर्माण

आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को, प्रत्येक देवकन्या को ब्रह्म चिन्तन करना चाहिए, ब्रह्म मनन करना है। जब ऋषियों ने राजा को यह कहा तो राजा ने कहा मेरे राष्ट्र में आप भोजन करो। मेरे राष्ट्र में कोई ऋणी नहीं है, न मैं किसी का ऋणी हूँ। उन्होंने कहा कि कैसे स्वीकार करें? राजा ने कहा प्रभु ! मैं प्रातःकाल ब्रह्म का चिन्तन करता हूँ। उसके पश्चात् देवपूजा करने लगता हूँ। उसके पश्चात् जब देवपूजा समाप्त होती है तो अतिथि पूजा में लग जाता हूँ। देव याग करता हूँ, पितृ याग करता हूँ। यह पंच याग सदैव मेरे राष्ट्र में होते हैं। जब मेरे गृह में होते हैं तो मेरी प्रजा में होते हैं। और जब मेरी प्रजा में होते हैं तो मेरे राष्ट्र में कोई ऋणी नहीं है। मैं भी ऋणी नहीं हूँ। मैं ऋषियों के द्वारा अपना याग कर्म करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे ! जब ऋषियों से यह निर्णीत कराया तो मुनिवरो ! उन्होंने कहा पान किया जाए। तो याग करने के लिए यज्ञशाला का निर्माण करने लगे। उन्होंने एक यज्ञशाला का निर्माण किया। जब यज्ञशाला का निर्माण किया तो नाना ब्राह्मणों का निर्वाचन हुआ। यजमान का निर्वाचन किया गया।

## आहुति कहाँ चली जाती है

याग जब प्रारम्भ होने लगा, तो एक ऋषि ने राजा से प्रश्न किया और यजमान से कहा हे यजमान ! यह जो अग्नि में आहुति दी जाती घृत की, साकल्य की यह आहुति कहाँ चली जाती है? तो मेरे प्यारे ! उस समय यजमान कहता है, हे ब्राह्मण ! वह आहुति पृथ्वी में विश्राम करती है। वह तमोगुण में प्रवेश कर जाती है। यह भिन्न–भिन्न आहुति जो प्रदान करता है वह पृथ्वी के अस्तित्व में चली जाती है। इसके पश्चात् वह मौन हो गये। मौन होने के पश्चात्





उन्होंने कहा भगवन् ! मैं आप से यह जानना चाहता हूँ कि यह आहुति कहाँ जाती है? उन्होंने कहा यह तीन धारा वाली आहुति बनती है। यह पृथ्वी में प्रवेश कर जाती है। यह एक आभा में प्रवेश कर जाती है। यह सतोगुणी आहुति कहलाती है और एक आहुति अग्नि तत्त्व कहलाती है—तीन धारा वाली यह जो अग्नि में तीन धारा वाली आहुति आभा में प्रकट हो जाती है।

## आहुति की धाराएँ

इसके पश्चात् ऋषि कहता है एक आहुति में तीन तीन धाराएँ स्थापित हो जाती हैं। तीन धाराएँ प्रारम्भ होती हैं। उनमें से तीन तीन धाराएँ प्रारम्भ हो करके वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहता है कि जब तीन–तीन धाराएँ प्रारम्भ होती है। एक–एक में से तो जब ब्रह्म तत्त्व में जाती हैं तो 72–72 तरंग उत्पन्न हो जाती हैं और वह जो 72–72 तरंगें उत्पन्न होती हैं तीनों में से यदि इनके ऊपर अनुसन्धान किया जाता है तो एक–एक में से 199–199 तरंगों का जन्म हो जाता है। और वह वायु मण्डल में प्रवेश कर जाती हैं। वायु मण्डल में जितनी गति परमाणुवाद की हो रही है अणुवाद लोक–लोकान्तर अपनी आभा में परणित हो रहे हैं। मेरे प्यारे ! इन्हीं तरंगों के आधार पर यह ब्रह्माण्ड गति कर रहा है। अपनी आभा में रमण कर रहा है।

परिणाम क्या है बेटा ! इन वाक्यों का कि यह सूक्ष्मत्तम एक यज्ञमयी स्वरूप माना है। यही विचार बन करके बेटा ! वायु–मण्डल में रहते हैं। हम श्वांस लेते हैं, प्राण की गति कर रहे हैं। हम जीवन को ऊँचा बना रहे हैं। मुनिवरो ! देखो राजा का राष्ट्र महान बन गया। राजा ने कहा धन्य हो भगवन् ! याग कर्म करने के पश्चात् यजमान उनको उत्तर दे करके मौन हो गया। ऋषि–मुनि सन्तुष्ट हो गये। उन्होंने कहा यजमान तो महान और विशाल हैं।

## पूर्व–दिशा

मुनिवरो ! उसके पश्चात् उन्होंने एक प्रश्न और किया। पूर्व दिशा में तुम्हारा मुख है। उन्होंने कहा इससे प्रकाश आता है। हम

प्रभु से याचना करते हैं कि हमें प्रकाश प्रदान करो। मेरे पुत्रो ! ऊर्ध्वा में अध्वर्यु रहता है। पूर्व दिशा में प्रकाश आता है। साकल्य का भण्डार ''पूर्वाअस्ति'' है यह वाक्य तो कल ही प्रकट करूँगा।

## महत्ता और स्वर्ग का मार्ग

आज का विचार तो मैं केवल यह देने के लिए आया हूँ कि प्रातःकालीन मेरे पुत्रो ! ब्रह्म का चिन्तन करना चाहिए। ब्रह्म का चिन्तन जो करते हैं वह आत्मा तत्त्व को प्राप्त करते हैं और जो आत्म तत्त्व वेत्ता होते हैं वह ब्रह्म को पा करके वह उस महा आभा में परणित हो जाते हैं। उस आभा में परणित होने के पश्चात् देवत्व उन्हें प्राप्त हो जाता है। वह देवता बन जाता है। वह ब्रह्म जिज्ञासु बन जाता है। ब्रह्म की आभा में रमण करने लगता है।

आओ मेरे प्यारे ! आज मैं तुम्हें गम्भीरता में ले जाना नहीं चाहता हूँ। केवल विचार यह कि माता–पिता हों, पति–पत्नी हों, उनको आत्म–चिन्तन करना चाहिए। ब्रह्म याग करना चाहिए और याग कहते हैं चिन्तन को, मनन को और उन विचारों को ऊर्ध्वा में ले जाए जैसे अग्नि साकल्य को ले करके, सूक्ष्म बना करके, अग्नि देवताओं का रूप बन करके सर्वत्र देवताओं को वितरण कर देता है, इसी प्रकार अपने विचारों को ले करके द्वितीय विचारों को देता चला जाए। देखो ! उन्हीं विचारों से यह संसार ऊँचा बनता है।

आओ मेरे प्यारे ! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने के लिए नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या का कर्त्तव्य है कि हम परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सदैव जानते रहें और उस आभा को जानते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएँ। क्योंकि प्रत्येक मानव यह चाहता है कि मेरा जीवन स्वर्गमय हो, मेरा जीवन आनन्दमय हो। आनन्द कैसे प्राप्त होता है? बेटा ! जो राजा करता है वह प्रजा करती है। माता–पिता करते हैं उसे बाल्य–बालिकाएँ करती है। आचार्य करता है उसको ब्रह्मचारी बरतता है। बेटा ! जो इनको जानता रहता है, इन वाक्यों के ऊपर चिन्तन और मनन करता है वही इस संसार





में महत्ता और स्वर्ग के लाने का प्रयास करता है।

आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हम परमपिता परमात्मा की आभा में रमण करते रहें और उसकी आभा को जानते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएँ। यह है बेटा ! आज का वाक्य। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम एक दूसरे के ऋणी न रहें। मानवता हमारे जीवन में हो और इस संसार सागर से पार हो जाएँ जो मान अपमान का सागर है। कल मुझे समय मिलेगा तो कल अतिथि के सम्बन्ध में, एक दूसरे का जो ऋणी बना हुआ मानव है वह एक दूसरे ऋण की चर्चाएँ हम कल करेंगे। आज का वाक्य अब हमारा समाप्त हो गया है। आज के विचार विनिमय करने का अभिप्राय यह कि आज हमने अपने विचारों की भूमिका बनायी है। इस भूमिका के संदर्भ की चर्चाएँ हमें इससे पूर्व के कालों में करेंगे। आज का विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है।

**आज का विचार यह क्या कह रहा है कि हमें एक दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए और वह मानव स्वर्गमय रहता है जो एक दूसरे का ऋणी नहीं रहता।** ऋणों की चर्चाएँ कल करेंगे। कितने प्रकार के ऋण होते हैं? इन ऋणों की चर्चा करने के लिए हम सदैव अपने में मनन करते रहते हैं। प्रत्येक मानव को भी मनन करना है। यह है मुनिवरो ! आज का वाक्य। समय मिलेगा तो शेष चर्चाएँ बेटा ! हम कल प्रकट करेंगे। यह आज का वाक्य समाप्त। अब वेद का पाठ होगा।

वेद पाठ.....।

अच्छा भगवन्!

आनन्दवत् रहो!

**दिनाँक : 13 मार्च, 1978**
**समय : दोपहर 3 बजे**
**स्थान : लाक्षागृह, बरनावा**

।। ओ३म् ।।

# यज्ञ क्या है

यज्ञ वह पदार्थ है जो मनुष्य का परमात्मा से मिलान कराता है। आज हमें यज्ञ कर्म करते हुए परमात्मा से मिलान करना है। आज यज्ञ करते हुए हमें संसार की त्रुटियों को नहीं देखना है। भौतिक यज्ञ करते हुए आध्यात्मिक यज्ञ में संलग्न हो करके परमात्मा से मिलान करना है। आज उस ब्रह्मा से मिलान करना है जिस ब्रह्मा ने सृष्टि को रचाया है।

मानव संसार में केवल यज्ञ वेदी को रचा सकता है। जैसे परमपिता परमात्मा ने सृष्टि रूपी यज्ञ वेदी को उत्पन्न किया है। जिसमें नाना लोक– लोकान्तर हैं। परमात्मा ने ब्रह्मा बन करके इस संसार रूपी यज्ञ के कर्मकाण्ड (नियम) को बना दिया जो आज तक चले आ रहे हैं और उस काल तक रहेंगे जब तक यह सृष्टि रहेगी। इसी प्रकार आज हमें यज्ञ के कर्मकाण्ड में इस प्रकार संलग्न हो जाना है कि आज हम जो यज्ञ का विधान बना लेवें वह संसार में अमर रहे। जिस प्रकार परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में सूर्य रूपी प्रकाश दिया और तब से यह प्रकाश चलता आ रहा है और उस काल तक रहेगा जब तक यह सृष्टि रहेगी। इसी प्रकार आज हमें यज्ञ के कर्मकाण्ड में इस प्रकार संलग्न हो जाना है कि आज हम जो यज्ञ का विधान बना लेवें वह संसार में अमर रहे। जिस प्रकार परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में सूर्य रूपी प्रकाश दिया और तब से यह प्रकाश चलता आ रहा है और उस काल तक चलता ही रहेगा जब तक यह संसार रहेगा। इसी प्रकार आज हमें भी वह यज्ञ करना है।

आज से पूर्व काल में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि यज्ञ करो। ऐसा सुन्दर करो, ऐसी आन्तरिक भावनाओं से करो कि जिससे तुम्हारा मिलान उस परमपिता परमात्मा से हो जाए। जिस प्रकार परमात्मा ने सृष्टि रूपी यज्ञ वेदी को उत्पन्न किया है उसी प्रकार आज तुम भी भौतिक यज्ञ को उत्पन्न करो जिससे ज्ञान और विज्ञान उत्पन्न होता है। जिससे हमें ज्ञान और विज्ञान की प्रेरणा मिलती है।





मुनिवरो देखो ! महाराजा कृष्ण की एक वार्ता मेरे कंठ आ गई। भगवान कृष्ण ने महारानी रुक्मणी से यज्ञ के सम्बन्ध में क्या शब्दार्थ कहे? महाराजा अर्जुन ने महारानी द्रोपदी से क्या शब्दार्थ कहे? आज मुनिवरो! यदि मैं संसार की पोथी को लेकर चलता हूँ तो विचार आता है कि यज्ञ मनुष्य का क्या–से–क्या कर देता है। भगवान कृष्ण से महारानी रुक्मणी ने एक समय प्रश्न किया कि यह जो आप यज्ञ करते हैं, यह क्यों करते हैं? इससे आपको क्या लाभ है? भगवान कृष्ण ने कहा–''हे देवी! मैं जो इस यज्ञ को कर रहा हूँ मैं चाहता हूँ कि मेरा मिलान परमात्मा से हो जाए। मेरी जो आन्तरिक भावना है, आन्तरिक जो तरंगें हैं वह परमात्मा से प्रेरित हों। परमात्मा से सहायता लेकर संसार का कार्य त्यागपूर्वक करता चला जाऊँ। यह जो यज्ञशाला है यह त्याग की भावना देती है। मुझे यज्ञशाला में विराजमान हो करके कैसा त्याग मिलता है? जब होता और यजमान घृत आदि अग्नि में त्यागते हैं तो उन्हें ज्ञात नहीं कि तूने जो त्याग किया है इसका फल क्या होगा? हे देवी! आज मैं यज्ञ कर रहा हूँ परन्तु त्याग भावना से। हमने घृत, सामग्री आदि की जो भी आहुति दी अग्नि सबका त्याग कर देती है और उन्हें अन्तरिक्ष में रमण करा देती है। उसको देवता ग्रहण करते हैं। देवता उसको पान करके हमारे सुख की वृष्टि करते हैं।

मुनिवरो ! आज हमारे हृदय में यह त्याग की भावना ही होनी चाहिए। यज्ञ हमें त्याग देता है, यज्ञ हमें अच्छी आत्मिक भावनाएं देता है। मुनिवरो! इस भौतिक यज्ञ के साथ–साथ हमें आत्मिक यज्ञ भी करना है। वह आत्मिक यज्ञ क्या पदार्थ है?

आत्मिक यज्ञ, मुनिवरो! वह यज्ञ है जो हमें परमात्मा से मिलान कराता है। हम उस माता की गोद में विराजमान हो जाते हैं जो हमारा कल्याण करने वाली है। जिसको हमारे वेदों ने दुर्गा कहा है, माँ काली कहा है और बहुत से रूपों से पुकारा है। हम उच्चारण कर रहे थे क्या **''यज्ञाः भौतिक यज्ञाः।** आज हमें आत्मिक यज्ञ भी करना चाहिए। होता हमारे कौन हैं? हमारी सामग्री क्या है? कौन अग्नि है? कौन हमारा ब्रह्मा है? इसके ऊपर हमें पूर्ण अनुसंधान करना चाहिए।

मुनिवरो! आज हमारा संकल्प व विकल्प आहुति देने वाला है जहाँ हम काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह सबकी सामग्री बना लेते हैं और ज्ञान रूपी अग्नि में इन सबको भस्म कर देते हैं, उस समय हमारा आत्मिक यज्ञ हो जाता है। इस यज्ञ का ब्रह्मा वह है जिसकी प्रेरणा से हम इस यज्ञ को करने के लिए विराजमान हो जाते हैं। बेटा! यह आन्तरिक प्रेरणा हमारी आत्मा है जो हृदय स्थल रूपी यज्ञशाला में विराजमान है। इस यज्ञ द्वारा उस आत्मा का सम्बन्ध परमात्मा से हो जाता है। जिस समय हम परमात्मा की गोद में जा बैठेंगे उस समय हमारे आनन्द का कोई अपार न रहेगा। मुनिवरो! हमारे आदि ऋषियों ने कहा है कि जब–जब यह आत्मा उस परमात्मा की गोद में विराजमान हो जाता है तो इसका जो नास्तिक परिवार है वह सब समाप्त हो जाता है और आस्तिक परिवार इसके द्वारा आ जाता है। अपने परिवार सहित यह परमात्मा में रमण कर जाता है। तो यह है मुनिवरो! आत्मिक यज्ञ जो आज हमें करना है। नाना इन्द्रियों के विषयों पर विचार करना है।

मुनिवरो! देखो, परमात्मा ने मानव का शरीर इसलिए बनाया है कि इसमें ओज और तेज हो। रसना परमात्मा ने दी इसमें ओज उत्पन्न करो। यह रसना किस पदार्थ की इच्छुक है? वह है सरवस्ती। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे निर्णय कराया कि आजकल संसार में मानव इस वाणी, इस रसना के पीछे इतना है कि अपनी मानवता को त्याग बैठा है। इस वाणी से तो हमें मानव बनना है। इस वाणी से हमें ब्रह्मा बनना है। इस वाणी से राम बनना है। इस वाणी से हमें कृष्ण बनना है। इस वाणी के ऊपर हमें विचार करना है।

आज देखो! दूसरों के भक्षणम् करने से हमारा यज्ञ सम्पन्न नहीं होगा। आज जब तुम्हारे द्वारा आहार और व्यवहार पवित्र होंगे तो तुम्हारी भावनाएं भी पवित्र होंगी, उच्च विचार होंगे। अपनी काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह की सामग्री बनाकर ज्ञान रूपी अग्नि में भस्म कर देना है। भौतिक यज्ञ के साथ आत्मिक यज्ञ भी करो जिससे आज तुम्हारा कल्याण हो। कल्याण की भावनाएं तुम्हारे द्वारा आएं।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक समय मुझे आर्यों का प्रश्न निर्णय कराया। परमपिता परमात्मा की कृपा से मुझे वह समय देखने का सौभाग्य





मिला है जब सर्वत्र संसार में आर्यों की पताका लहराती थी। आर्यों की पताका किस काल में थी? भगवान राम के राष्ट्रों में आर्यों की पताका थी जिन्होंने अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाया। आज देखो! आर्यत्व क्या कहता है? मर्यादा को ऊँचा बनाओ। हमारे द्वारा मर्यादा क्या है? मुनिवरो! हमारे द्वारा एक आन्तरिक भावना और एक भौतिकवाद है। दोनों को ऊँचा बनाना है। दोनों में ज्ञान और विज्ञान की प्रेरणा देनी है। यज्ञ की मर्यादा ज्ञान विज्ञान से चलती है। आज ज्ञान को अपनाओ तुम्हारा वास्तविक कल्याण होगा। आज संसार आर्य बनना चाहता है। मैं तो यह कहा करता हूँ कि आर्यों का जीवन यज्ञमय होता है। दोनों प्रकार के यज्ञों का कर्म उनकी भुजाओं में होता है। उनके द्वारा 'ओ३म्' की पताका होती है, 'मर्यादा' की पताका होती है, ''यज्ञ'' की पताका होती है, ''राष्ट्र'' की पताका होती है। तो संसार का कल्याण होता है।

आज यहाँ समालोचना करने से संसार का उत्थान न होगा। दूसरों की त्रुटियाँ देखने से संसार का कल्याण न होगा। आज अपनी त्रुटियाँ देखने से संसार का कल्याण होगा। मेरे प्यारे महानन्द जी कहेंगे कि गुरुजी यह क्या उच्चारण करने लगे अपनी त्रुटियों को देखकर ही संसार का कल्याण कैसे हो सकता है? सुनो जब यह संसार आर्य बनकर अपनी त्रुटियों पर विचार करेगा कि मेरे द्वारा कितनी त्रुटियाँ हैं, मैं कितना पापी हूँ तो उस समय मानव का कल्याण होगा। आगे चलकर आगे बढ़ते रहेंगे और संसार को ऊँचा बना सकेंगे। आज संसार में हमें यह नहीं देखना कि यह मानव किस प्रकार का है, राष्ट्र किस प्रकार का है, संसार में क्या हो रहा है? आज हमें यह देखना है कि मेरे द्वारा कितनी त्रुटियाँ हैं। क्या वेद की पोथियों को जानने से मेरा कल्याण होगा? कदापि नहीं। इस सम्बन्ध में आदि ऋषियों ने, महाराजा वशिष्ठ जैसे आचार्यों ने कहा है कि तुम वेद की पोथियों को जानो अवश्य, परन्तु अपनी आत्मा के भाव को भी जानो। यह जो काम, क्रोध, मद, लोभ व मोह आदि के मल विक्षेप आवरण हैं इन्हें ज्ञान अग्नि में भस्म करके शान्त करो।

**दिनाँक : 7 नवम्बर, 1963**
**स्थान : यज्ञ पण्डाल बी.सी. पार्क, सरोजनी नगर, नई दिल्ली**

।। ओ३म् ।।

# Spiritual Lights [Contd.]

Today I do not want to elaborate much upon this subject as, otherwise, it will take us into denser zones of knowledge. I only want to infer that we should carry the contention with us that in some worldly spheres the Yajna is performed by cow's 'ghrit' in some others it is performed by thoughts while in some others it is performed by 'Prag' waters. In this way man may be related to the other worldly spheres also.

My dear Son! you know that the yogic talks with which I have obliged you today have been the inference, and experience, of thousands of years. Hundred thousands of years have been spent on this research. To-day, I am unable to express fully becuase of my period of distress and curse. But my respected Gurudev used to say that it is certainly better to express something than not to express at all. Today my condition has become likewise handicapped. Those old days were how fine and splendid ! At the dead of night, letters could be visualised with the light of sub-conscience. The Yogi who attains divine eyes can read letters in night also.

Now the question may arise that when the Mind and the Prana are synchronized, both retain their individidual identities or they coexist in some other particular form. The attribute can not be separate from the attributed. The Atmana only mobilized the Mind by its mere contact. It only divides the Prana. This only is responsible for the functions of the body which is constituted of the world of matter. This Atma has been considered by some as microsome & by some others as macrosome. But most of the rishis, after long reflections & research, have been of the opinion that the Atma may be considered as microsome. As soon as Atma comes in contact with the world of matter, the divine lights of the three types of bodies are switched on. Their generation is considered to be from the heart. And in the heart (the seat of emotions)





only the contact with Atma is established. The sages have so accepted that by mere contact (with Atma) only the heart cycle works.

My dear Mahanand ji generally desires to know my views in this regard, My observance is that the dynamic principle of this heart is such that it can scan the entire space. It is also believed that like this gross heart, there is a subtle heart with the help of which the divine souls co-ordinate with each other or meet among themselves for 'Satsang' (a holy congregation). But in that realm also, the influences of the Mind and Prana prevail.

About 1552 currents emanate from the heart. In that about eighty four currents are perceivable by Yogic Science through which the seeker, by observing the prescribed yogic disciplines, and practices, becomes the knower of all the 1552 currents. Each of those currents, in its turn, gives rise to seventy two sub-currents. Those currents pretain to the Divine bodies; they as a whole constitute the Divine Body.

This subject of Yoga is a dense forest. In those currents there are 'Satoguni' currents; there are currents which are related to the innumerable worlds. Besides, there are many other different types of currents.

The Fire principle also has about 1552 currents. The Sound principle too has as many currents. Each current gives rise to seventy two sub-currents. The seventy second current has a specialised significance. With current the divine soul remains in harmony.

The essence of our talks is that we should try to know the Science of Yoga in right earnest. The Science of the Supreme Being is infinite. It evolves only just by His vicinity. The common men proclaim the description of all these currents as a mere hoax. Their intellect can not soar that high. Because, unless they have known in the field of their experience the currents of the intellect and the mind, how can they appreciate what is right? Some people of this type amass some vague talks according to their limited vision and thereby continue to

prevail in ordinary society, but when they meet with the great people, with the elevated people or still more with the divine souls, then they begin to realize what 'Veda' is ; what society is ; what the Divine world is and what Moksha is called.

My dear rishivar ! our talks of today are coming to an end now. Again it may be advised that we should be trying to understand the sublime currents which emanate from the Supreme Being. The Science of words also evolves from Him only. When the mind is withdrawn from its sense-objects and the Brahmrandra is in resonance, then a note is produced which is known as **'Anad'**. The being who can understand the overtones of that 'Anad' becomes the knower of the science of words.

The talks of today end here now. If I find time, I shall deal with the rest tomorrow. Now there will be some recital from the Vedas and then it is all over for to-day.

•••

**Pujyapad Gurudev**

**Yogic Wisdom of the Ancient Rishies.**

**Parvachan Dated 13th April, 1971**

# सूचना

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज द्वारा संस्थापित वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.) दिल्ली को दानदाताओं द्वारा दान देने पर आयकर विभाग की धारा 80 जी के अन्तर्गत छूट 26–9–2014 को मिल गई है जो कि 2015–2016 से लागू है।

**वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.)**





## योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

| | | |
|---|---|---|
| 1. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 1) | 80.00 |
| 2. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 2) | 50.00 |
| 3. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 3) | 50.00 |
| 4. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 4) | 50.00 |
| 5. | यौगिक प्रवचन माला (भाग 5) | 50.00 |
| 6. | Yogic Wisdom of Ancient Rishis | 50.00 |
| 7. | वेद पारायण–यज्ञ का विधि विधान | 25.00 |
| 8. | आत्म–लोक | 35.00 |
| 9. | धर्म का मर्म | 30.00 |
| 10. | शंका–निवारण | 30.00 |
| 11. | यज्ञ–प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व | 40.00 |
| 12. | आत्मा व योग–साधना | 35.00 |
| 13. | देवपूजा | 20.00 |
| 14. | अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1) | 110.00 |
| 15. | अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2) | 110.00 |
| 16. | अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3) | 100.00 |
| 17. | रामायण के रहस्य | 35.00 |
| 18. | यज्ञ एवं औषधि विज्ञान | 40.00 |
| 19. | महाभारत के रहस्य | 25.00 |
| 20. | अलङ्कार–व्याख्या | 35.00 |
| 21. | रावण–इतिहास | 50.00 |
| 22. | महाराजा–रघु का याग | 25.00 |
| 23. | वनस्पति से दीर्घ–आयु | 35.00 |
| 24. | मोक्ष प्राप्ति का मार्ग | 30.00 |
| 25. | चित्त की वृत्तियों का निरोध | 25.00 |
| 26. | आत्मा, प्राण और योग | 35.00 |
| 27. | पंच–महायज्ञ | 30.00 |
| 28. | अश्वमेघ–याग और चन्द्रसूक्त | 30.00 |
| 29. | याग–मन्जूषा | 25.00 |
| 30. | आत्म–दर्शन | 30.00 |
| 31. | पुत्रेष्टि–याग और मातृ–दर्शन | 25.00 |
| 32. | याग और तपस्या | 45.00 |
| 33. | यागमयी–साधना | 35.00 |
| 34. | यागमयी–सृष्टि | 25.00 |
| 35. | याग–चयन | 25.00 |
| 36. | दिव्य–रामकथा | 110.00 |
| 37. | ज्ञान–कर्म–उपासना | 25.00 |
| 38. | दिव्य–ज्ञान | 35.00 |
| 39. | महाभारत एक दिव्य दृष्टि | 80.00 |
| 40. | महर्षि–विश्वामित्र का धनुर्याग | 25.00 |
| 41. | आत्म–उत्थान | 30.00 |
| 42. | तप का महत्व | 30.00 |
| 43. | अध्यात्मवाद | 25.00 |
| 44. | ब्रह्मविज्ञान | 35.00 |
| 45. | वैदिक–प्रभा | 30.00 |
| 46. | प्रकाश की ओर | 35.00 |
| 47. | कर्तव्य में राष्ट्र | 35.00 |
| 48. | वैदिक–विज्ञान | 35.00 |
| 49. | धर्म से जीवन | 30.00 |
| 50. | आत्मा का भोजन | 35.00 |
| 51. | साधना | 30.00 |
| 52. | त्रेताकालीन–विज्ञान | 40.00 |
| 53. | यज्ञोमयी–विष्णु | 40.00 |
| 54. | यौगिक प्रवचन माला भाग–6 | 60.00 |
| 55. | स्वर्ग का मार्ग | 40.00 |
| 56. | यौगिक प्रवचन माला भाग–7 | 60.00 |
| 57. | माता मदालसा | 40.00 |
| 58. | यौगिक प्रवचन माला भाग-8 | 60.00 |
| 59. | यौगिक प्रवचन माला भाग-9 | 65.00 |
| 60. | यौगिक प्रवचन माला भाग-10 | 70.00 |
| 61. | याग एक सर्वाङ्ग पूजा | 80.00 |
| 62. | यौगिक प्रवचन माला भाग-11 | 80.00 |
| 63. | यौगिक प्रवचन माला भाग-12 | 80.00 |
| 64. | मानव कल्याण की चर्चाएं | 50.00 |
| 65. | प्रभु दर्शन | 50.00 |
| | पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह | 10.00 |

# पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 01234–240395
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)। मो. नं. : 09412888050
3. सुश्री नीरू अबरोल, के–3, लाजपत नगर–3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011–41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली–110017 दूरभाष नं. 011–26498737
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए–84, मालवीय नगर, नई दिल्ली–110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी, सी–47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120–4165802
7. श्री आशीष त्यागी, डी–293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड–201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120–2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4, पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122–2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर–3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मो. नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर–110–मार्किट नोएडा, फेस–2, (उ.प्र.) मो. नं. 09899228860, 09871367937
12. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011–23282088
13. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला–जे.पी. नगर (उ.प्र.) मो. नं. 09412139333
14. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे–380, सैक्टर बीटा–2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मो. नं. 09313530505
15. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
16. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011–23977216





# मासिक सहयोग

| | |
|---|---|
| **श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली** | **1000 रुपये** |
| **श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़, उत्तर प्रदेश** | **1000 रुपये** |
| **श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर** | **1000 रुपये** |
| **श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा** | **1000 रुपये** |
| **श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश** | **500 रुपये** |
| **श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद** | **500 रुपये** |
| **मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा** | **251 रुपये** |
| **मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा** | **251 रुपये** |
| **डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात** | **250 रुपये** |
| **श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा** | **200 रुपये** |
| **डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा, उत्तर प्रदेश** | **125 रुपये** |
| **श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली** | **100 रुपये** |
| **श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश** | **100 रुपये** |
| **मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश** | **101 रुपये** |
| **मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली** | **101 रुपये** |

# नम्र–निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''संहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से प्रस्तुत है :–

**पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली**

**बैंक खाता नं. – 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900**

**वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.)**

**योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज**

## उद्‌बोधन

हे मानव! यदि तू परमात्मा की सृष्टि में आया है तो परमात्मा के अनुकूल कार्य कर। परमात्मा तुझे जो प्रेरणा देता है उसके आधार से चल अन्यथा अपने जीवन को शान्त कर दे और परमात्मा की सृष्टि में न आ। ऊँचा बनने के लिए परमात्मा ने तुझे सब कुछ सामग्री दी है। आज तू दूसरे जीवों का भक्षण करने वाला क्यों बन रहा है? तू रक्षा करने वाला बन। आज वह रक्षा कर कि सिंह तक तेरे चरणों में आ जाएँ। आज वह रक्षा कर कि जिन जीवों का तू भक्षण करता है वह तेरी रक्षा के लिए स्वयँ उद्यम हो जाएँ। जिसकी तू रक्षा करेगा वह स्वयँ तेरी रक्षा करेगा। संसार में जो गौ की रक्षा करता है गौ उसे दुग्ध देती है। आज जो भी जिसकी रक्षा करता है वह स्वयँ ही उसका साथी बन जाता है और साथी बन करके हर समय उसके कल्याण की सोचता रहता है। हे मानव! तुझे अहिंसावादी बनना है।

**पूज्यपाद–गुरुदेव**

**(यज्ञ प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व)**



**वर्ष 43 : अंक : 508**
**जनवरी 2015**

**मूल्य :**
**दस रुपये**

**प्रकाशक, मुद्रक : डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक अनुसंधान समिति पंजी.**
**के लिए नवप्रभात प्रिंटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी–38,**
**शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली–17 से प्रकाशित।**
**(अवै.) सम्पादक : डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 26498737**

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2015-17
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2012-14
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-01-2015
**Published on 5th day of the same month**

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-01-2015
**Published on 5th day of the same month**